प्रसंगश:

आलोक मेहता

जानलेवा रेल का सरकारी खेल

280 मासूम लोगों के मारे जाने के लिए बड़े नेता और अधिकारी जिम्मेदार क्यों नहीं ?

रमाकांत को सिंडिकेट बैंक प्रशिक्षण कार्यक्रम के बाद बैंगलूर से मुंबई वापस आना था लेकिन भारी बारिश के कारण निर्धारित ट्रेन रद्द हो गई। मुंबई पहुंचने के बाद बैंक की अगली महत्वपूर्ण बैठक थी। इसलिए तीन अन्य अधिकारियों के साथ उन्होंने दौड़-भाग कर गोवा के रास्ते मुंबई पहुंचने की तैयारी की। कोंकण रेलवे की तारीफ बहुत सुनी थी। गोवा पहुंचने के बाद मुंबई जाने के लिए सबको तुरंत रिजर्वेशन नहीं मिला। दो अधिकारी सड़क मार्ग से चल दिए। एक अधिकारी को ए.सी. डिब्बे में एक सीट मिल गई। ईमानदार और भले रमाकांत ने अवैधानिक ढंग से साथी की एक बर्थ पर ही बैठने से इनकार कर दिया। दिलासे के लिए रेल के उसी डिब्बे में साथी से कहा कि वह किसी अन्य ट्रेन से मुंबई पहुंच जाएंगे। फिर थोड़ी देर बाद पीछे किसी अनारक्षित डिब्बे में पैर रखने की जगह बना ली। टिकट तो पहले से था ही। लेकिन 22 जून की उस काली रात में बारिश ने रत्नागिरि के पास चट्टानें ऐसी खिसकाईं कि अंधेरे में इंजन ड्राइवर ट्रेन पर काबू न कर सका। भीषण रेल दुर्घटना हो गई। ए.सी. डिब्बे में बैठे सहयोगी ने घायल हालत में यही सूचना भिजवाई कि रमाकांत उस ट्रेन से चले ही नहीं थे। लेकिन दो दिन बाद दुर्घटनाग्रस्त ट्रेन के सामान से अता-पता मिलने के बाद गोवा अस्पताल में रमाकांत का शव क्षत-विक्षत स्थिति में मिला। परिजनों पर तो पहाड़ ही टूट पड़ा। लेकिन भारतीय रेलवे के ब्रिटिश राज वाले नियम-कानून कहते हैं कि यदि रेल की पटरियों पर चट्टान गिरे या पानी भरा हो तो इसे प्राकृतिक कारणों से हुई दुर्घटना माना जाएगा और अन्य दुर्घटनाओं की तरह कोई मुआवजा नहीं मिलेगा। इस हादसे में 51 लोग मरे थे। इससे लगभग एक महीने पहले 15 मई को लुधियाना के पास गोल्डन टैंपल मेल में लगी आग में 38 लोग मारे गए थे।

दो साल पहले 22 जून की काली रात में मंगलोर-चेन्नई मेल केरल की कदलुंडी नदी में गिरने से 59 लोग मरे थे। नदी-पहाड़, कोहरे, वर्षा से होने वाली दुर्घटनाओं में मारे जाने वाले लोगों के जान की कोई जिम्मेदारी रेलवे अपने सिर नहीं ले सकता। लेकिन आंध्र प्रदेश में कासिपेट स्टेशन के निकट गोलकुंडा एक्सप्रेस के ब्रेक फेल हो जाने से हुई दुर्घटना में 22 लोगों के मरने पर रेलवे में क्या कोई हड़कंप मचा? खानापूर्ति के लिए चार-पांच अधिकारी निलंबित हो गए। पिछले दस महीने में रेल दुर्घटनाओं में करीब 280 लोग मारे गए और मात्र 12 अधिकारियों पर कागजी कार्रवाई कर रेल मंत्रालय ने अपने हाथ झाड़ लिए। कभी इंजीनियरिंग गड़बड़ी की बात आती है, तो कभी 'तोड़-फोड़' की आशंकाओं को आधार बनाकर लीपापोती कर दी जाती है। गोधरा कांड पर देश के सबसे बड़े दंगे करवाने वाले नेताओं की आंखों से आए दिन होने वाली रेल दुर्घटनाओं में मारे जाने वाले लोगों की सहानुभूति में आंसू की दो बूंद नहीं टपकतीं।

2 जुलाई को जिस रेल मार्ग पर दुर्घटना हुई, वहीं 1991 में भी बड़ा हादसा हुआ था। तब भी जांच के आदेश दिए गए थे और जांच रिपोर्ट कहीं तहखाने में दफन हो चुकी है। रेल मंत्री, रेल बोर्ड के अध्यक्ष, बोर्ड के कथित इंजीनियरिंग सदस्य, दुर्घटना रोकने के उपाय खोजने के लिए करोड़ों रुपयों के वेतन-भत्ते लेने वाले वरिष्ठ अधिकारी कभी अपनी जिम्मेदारी नहीं स्वीकारते। हर बार कंप्यूटर में तैयार 'शोक संवेदना संदेश' रेल मंत्री, प्रधानमंत्री और अन्य नेताओं की तरफ से जारी हो जाता है। हर साल 2 अक्टूबर को पूर्व प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री को पुष्पांजलि और श्रद्धांजलि देने में भी राजनीतिक नेता सबसे आगे रहते हैं लेकिन शास्त्रीजी की तरह रेल दुर्घटना होने पर इस्तीफा देने की पेशकश कोई नहीं करता। एकाध बार इस्तीफा दिया भी गया तो मुख्यमंत्री पद पाने के उद्देश्य को पूरा करने के लिए नाटक रचा गया। संवेदनहीनता की पराकाष्ठा वर्तमान व्यवस्था में दिखाई देती है। दूसरी तरफ संसद में कभी इस मुद्दे पर विचार नहीं होता कि किसी भी रेल दुर्घटना के लिए सहायता और मुआवजे का मानदंड समान होना चाहिए। विमान दुर्घटना में मारे गए व्यक्ति का मुआवजा अधिक क्यों होता है? आरक्षित डिब्बों में बैठे व्यक्ति के मरने पर मुआवजा आसान है लेकिन अनारक्षित डिब्बे में मृतक के परिवारों को महीनों-वर्षों तक जाने कितने प्रमाण उपलब्ध कराने होते हैं। फिर 25 हजार से 1 लाख रुपये मात्र की सहायता से क्या मृतक का परिवार सामान्य ढंग से जीवन-यापन कर सकता है? जब रेल कर्मचारियों को गलती पकड़ में आई तो मंत्री ने पांच लाख के मुआवजे की घोषणा कर दी। यह तदर्थ व्यवस्था है। हर दुर्घटना के लिए अलग-अलग रेट बन रहे हैं। इस संबंध में एक नीति तय क्यों नहीं होती? जाति, धर्म, पार्टी के नाम पर समर्थन जुटाने के लिए जो नेता हथियार, शराब और मुआवजे के लिए लाखों रुपये उड़ा देते हैं, सरकारी रेलवे की गलतियों से होने वाली कथित प्राकृतिक दुर्घटना पर एक सौ रुपये भी खर्च नहीं करना चाहते।

उदारीकरण के दौर में सरकारी उपक्रमों या निजी संस्थानों में दुर्घटना के शिकार व्यक्ति के निकटस्थ परिजन को नौकरी देने का प्रावधान भी लगभग समाप्त हो गया है। रेलवे को विदेश में बने डिब्बे खरीदने पर करोड़ों रुपये खर्च करने में संकोच नहीं होता क्योंकि इसमें 'इंपोर्टेड कोच' की शान के साथ अच्छा खासा कमीशन भी रहता है। भारत में बने डिब्बे विदेशों में बिक सकते हैं लेकिन यहां 'आलीशान' और 'आरामदेह' की श्रेणी में नहीं माने जाते। इस तरह के पचीसों मद हैं जिनमें हर साल करोड़ों रुपये बर्बाद किए जा रहे हैं। कैटरिंग के ठेकों में भी करोड़ों का खेल है। सत्ता व्यवस्था फिजूलखर्चों पर कड़ा नियंत्रण कर क्या न्यायिक और व्यावहारिक मुआवजे की राशि तय नहीं कर सकती?

> रेल दुर्घटनाओं पर संसद के हर सत्र में चिंता व्यक्त करने वाले सांसद क्या रेल दुर्घटनाओं की एक दशक में हुई जांच-पड़ताल के प्रतिवेदनों पर अमल के लिए दबाव नहीं बना सकते?

रेल दुर्घटनाओं पर संसद के हर सत्र में चिंता व्यक्त करने वाले सांसद क्या रेल दुर्घटनाओं की एक दशक में हुई जांच-पड़ताल के प्रतिवेदनों पर अमल के लिए दबाव नहीं बना सकते? अपने-अपने क्षेत्र में रेलगाड़ी चलवाने या तेज चलने वाली गाड़ी को हर नजदीकी स्टेशन पर रोकने की मांग करने वाले रेल सुरक्षा तंत्र पर संसद की कार्यवाही ठप क्यों नहीं करते? रेल की दशकों पुरानी पटरियों की मरम्मत और बदलाव के लिए युद्ध स्तर पर काम के लिए राजनीतिक दलों में सर्वानुमति क्यों नहीं हो सकती? इराक में अमेरिका की सहायता के लिए सेना भेजने पर होने वाला अरबों का खर्च उठाने को सरकार तैयार है लेकिन आए दिन होने वाली रेल दुर्घटनाओं में मरते सैकड़ों लोगों की जान बचाने के लिए खर्च करने में बजट की कमी का बहाना पेश करती है। भारतीय रेल की जानलेवा छवि बनने पर क्या विदेशी पर्यटक अधिक संख्या में भारत की यात्रा करने की हिम्मत जुटा सकेंगे? ●